अमेरिकी सत्ताधारियों के हाथ खुद अपनी जनता के खून से रंगे हैं

कात्यायनी

'जिन्होंने ऐसा जघन्य कांड हमारे देश में आकर किया है हम उन्हें उनके छिपने के बिलों से निकालकर धुएं में उड़ा देंगे। हम उन्हें दौड़ा-दौड़ाकर मारेंगे और उनके साथ विधिवत न्याय करेंगे।' किसी चालू बम्बइया फिल्म के खलनायक जैसी भाषा में ये धमकियां 'वर्ल्ड ट्रेड सेंटर' और पेंटागन पर आत्मघाती आतंकवादी हमलों के बाद अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश जूनियर ने उन अज्ञात आतंकवादियों को दी जिनके बारे में घटना के एक हफ्ते बाद भी ठीक-ठीक नहीं पता चल सका है। अभी तक सिर्फ शक के आधार पर ओसामा बिन लादेन को इन हमलों का जिम्मेदार मानकर "अन्तरराष्ट्रीय आतंकवाद" के खिलाफ लम्बी लड़ाई लड़ने के संकल्प लिये जा रहे हैं और दुनिया के लुटेरे शासक बढ़-चढ़कर इस लड़ाई में साथ देने का आश्वासन दे रहे हैं।

लेकिन बुश, क्लिंटन, रीगन, टोनी ब्लेयर, जान मेजर या थैचर जैसों की जमात आतंकवादियों के हाथों हजारों बेगुनाहों की मौत की भर्त्सना भला किस मुंह से कर रही है? सद्दाम हुसैन को सजा देने के लिए जब वे बगदाद पर अन्धाधुन्ध बमबारी करते हैं तो क्या उन्हें वहां के बेगुनाह आम लोगों की रत्ती भर भी याद आती है? क्या यह भूला जा सकता है कि ईरान के विरुद्ध सद्दाम हुसैन को इस्तेमाल करने और उन्हें भरपूर मदद करके खाड़ी युद्ध को लम्बे समय तक चलाने का काम अमेरिका ने ही किया था। दुनिया की जनता यह भी नहीं भूली होगी कि ओसामा बिन लादेन के आतंकवादी ग्रुप को अफगानिस्तान पर हावी सोवियत साम्राज्यवाद और उसके द्वारा समर्थित सत्ता के विरुद्ध अमेरिका ने ही धन, हथियारों और प्रशिक्षण की भरपूर मदद देकर खड़ा किया था और दक्षिण एशिया में अपने हितों के मद्देनजर उसने कभी गुलबुद्दीन हिकमतयार से लेकर तालिबान तक को हर तरह सहायता दी थी।

दुनिया पर अपनी साम्राज्यवादी चौधराहट कायम करने के लिए स्वयं अमेरिका जिन नीतियों पर अब तक चलता रहा है और आगे भी, इस नरसंहार के बाद भी जिन पर चलने से वह बाज नहीं आयेगा, उनका खामियाजा तो उसे भी भुगतना ही होगा। ग्यारह सितम्बर को डब्ल्यू.टी.सी. की 110 मंजिला इमारत के धराशायी होने और अभेद्य माने जाने वाले पेंटागन कार्यालय पर हमले के बाद क्यूबा के राष्ट्रपति फिदेल कास्त्रो ने ठीक ही कहा कि अमेरिका ने ही कभी आतंकवाद को पालने-पोसने का काम किया था, अब उसे इसका खामियाजा भुगतना पड़ रहा है।

यह अमेरिकी हुकूमत ही है जिसने विश्व स्तर पर आतंकवाद को, धार्मिक कट्टरपंथ को पैदा किया है और मजबूत बनाया है। विश्व व्यापार केन्द्र पर हमला चाहे ओसामा बिन लादेन के लोगों ने किया हो, या चाहे किसी फिलिस्तीनी ग्रुप ने, चाहे लातिनी अमेरिका के किसी आतंकवादी क्रांतिकारी संगठन ने किया हो या हिरोशिमा-नागासाकी का बदला लेने के लिए जापान की किसी 'रेड आर्मी' ने या फिर अमेरिका के भीतर के ही किसी आतंकवादी ग्रुप ने किया हो, इस नरसंहार की जिम्मेदारी बुनियादी तौर पर अमेरिकी शासक वर्ग की ही मानी जायेगी। उस हत्यारे शासक वर्ग की, जो फिलिस्तीनियों की नारकीय ज़िन्दगी के लिए, अंगोला और कई अन्य अफ्रीकी देशों में दशकों से जारी खूनी गृहयुद्धों के लिए तथा लातिन अमेरिकी देशों में अपने वर्चस्व को बनाये रखने के उद्देश्य से प्रत्यक्ष-परोक्ष हस्तक्षेप करता रहा है।

बेशक, आतंकवादियों की यह कार्रवाई निराशा और बदले की भावना से प्रेरित रही है। यह और ऐसी तमाम कार्रवाइयां अमेरिकी प्रभुत्ववाद और पूरे साम्राज्यवादी तंत्र को नष्ट नहीं कर सकतीं। लेकिन, आज अमेरिका और अमेरिका के सभी सहयोगी देशों की सरकारें और मुख्य धारा की मीडिया "मानवता पर हमले" बातें अगर कर रहा है तो यह साम्राज्यवादी-पूंजीवादी दुनिया के नन्दन-कानन में व्याप्त भय और बदहवासी के सिवा और कुछ नहीं है। इनका "मानवतावाद" उस समय कहां उड़नछू हो जाता है जिनकी मुनाफे की हवस, उससे प्रेरित-संचालित राजनीति और युद्धों से प्रतिदिन पूरी पृथ्वी पर दसियों हजार लोग मौत के मुंह में समा जाते हैं। न्यूयार्क-वाशिंगटन की तबाही त्रासद है, लेकिन इतनी महंगी कीमत चुकाकर शायद अमेरिकी जनता यह समझ सके कि यह उनके शासकों की नीतियां ही हैं जिन्होंने यह विनाश का मंजर रचा है।

इस महाविनाश के बाद शायद अमेरिकी अवाम यह समझ सके कि वियतनाम को नापाक बमों और बारूदी सुरंगों से पाटने वाले,

कोरियाई जनता पर कहर बरपा करने के बाद देश को बांट देने वाले, इराक की आर्थिक नाकेबन्दी कर बरसों बम बरसाने वाले, चालीस वर्षों से क्यूबा की आर्थिक नाकेबन्दी करने वाले, अतीत में फिलिप्पींस और इंडोनेशिया के तानाशाहों की पीठ पर खड़े होकर लाखो लोगों को कत्लेआम करवाने वाले उनके सत्ताधारियों के खिलाफ पूरी पृथ्वी पर नफरत की भट्ठी धधक रही है। हालांकि नरसंहार के बाद अमेरिकी शासक ठीक उसी प्रकार ओसामा बिन लादेन को शैतान के रूप में प्रस्तुत कर अमेरिकी अन्ध महाराष्ट्रवादी ('बिग नेशन शावनिज्म') भावनाओं को भड़काने की कोशिश में जुट गये हैं जिस प्रकार उन्होंने सद्दाम हुसैन के साथ किया था। ऐसा करके अमेरिकी सत्ताधारी विश्व प्रभुत्व की अपनी चौधराहट पर लगे तगड़े झटके से उबरने की कोशिश में एक नया विनाश रचने की भूमिका बना रहे हैं और इस सच्चाई को अमेरिकी जनता की आंखों से ओझल करने की कोशिश कर रहे हैं कि खुद उनके हाथ अपने लोगों के खून से रंगे हैं।

दरअसल, अमेरिकी शासकों को न्यूयार्क-वाशिंगटन में हुई तबाही की और दसियों हजार लोगों के मारे जाने की फिक्र नहीं है। डब्ल्यू.टी.सी. की जुड़वां मीनारों से भी भव्य मीनारें तो दुनिया को लूटकर फिर से खड़ी हो जायेंगी. और हजारों-हजार ज़िन्दगियों का सौदा तो पूंजी के सौदागर रोज ही करते हैं। लेकिन इस महाविनाश के बाद शायद अमेरिकी अवाम यह सोचने पर मजबूर हो कि डब्ल्यू.टी.सी. और पेंटागन पर हमले के बाद आखिर क्यों बेरूत के शरणार्थी शिविरों से लेकर गाजा पट्टी और पश्चिमी तट तक, स्त्रियों-बच्चों सहित फिलिस्तीनियों का सैलाब जश्न मनाने सड़कों पर उतर आया? यही नहीं, अधिकांश अरब देशों की जनता में, खासकर इराक में जश्न का माहौल क्यों है? सर्बिया से लेकर लातिन अमेरिका तक के देशों में बुद्धिजीवी और छात्र आतंकवाद की भर्त्सना से अधिक इस बात की चर्चा क्यों कर रहे हैं कि यह अमेरिका की भूमंडलीय चौध राहट का नतीजा है और यदि इन नीतियों में बदलाव नहीं आता तो इसका खामियाजा आगे भी अमेरिकी जनता को उठाना पड़ेगा।

यह साफ है कि आज अमेरिकी जनता जिस मौत की घाटी से गुजर रही है उसे स्वयं अमेरिकी शासक वर्ग ने रचा है। यह भी साफ दिख रहा है कि किसी भी साम्राज्यवादी देश के शासक की तरह जार्ज बुश विश्व स्तर पर आतंकवाद को बढ़ावा देने वाली अपनी नीतियों पर पुनर्विचार करने की कोई मंशा नहीं रखते। इसलिए, यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि अमेरिका न सिर्फ आतंकवाद का संरक्षण-संपोषक रहा है, बल्कि वह स्वयं एक आतंकवादी देश है। वह सामरिक आतंकवाद से लेकर आर्थिक आतंकवाद तक में लिप्त है। न्यूयार्क-वाशिंगटन में हुए आतंकवादी हमले उसके आतंकवाद का सिर्फ आतंकवादी प्रतिकार मात्र है। यह एक किस्म का 'प्रति आतंकवाद' (काउण्टर टेररिज्म) है।

वर्ल्ड ट्रेड सेंटर की इमारत अमेरिकी वित्तीय पूंजी की शक्तिमत्ता का स्मारक थी और पेंटागन मुख्यालय उसकी सामरिक प्रभुता का प्रतीक चिह्न। इन दोनों के धराशायी होने से अमेरिकी उद्धत अहम्मन्यता का गुब्बारा तो पंक्चर हुआ ही है, अन्य सभी साम्राज्यवादी हुकूमतें भी एकबारगी अकबका सी गयी हैं। कोई भी इस आतंकवादी कार्रवाई से सहमत नहीं हो सकता जिसमें हजारों बेगुनाह लोग मारे गये, लेकिन सच्चाई का यह एक ऐसा पहलू है जिसकी अनदेखी नहीं की जा सकती। साथ ही, इतिहास के इस निर्मम वस्तुगत तर्क की भी अनदेखी नहीं की जा सकती कि तमाम-तमाम युद्धों में (और आतंकवाद भी एक युद्ध ही है, यह तो बुश भी मानते हैं) सबसे अधिक विनाश तो बेगुनाहों को ही झेलना होता है। इसलिए बुनियादी बात तो यह है कि युद्ध के बुनियादी कारणों पर ही सोचा जाये।

यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगा कि अमेरिका न सिर्फ आतंकवाद का संरक्षण-संपोषक रहा है, बल्कि वह स्वयं एक आतंकवादी देश है। वह सामरिक आतंकवाद से लेकर आर्थिक आतंकवाद तक में लिप्त है। न्यूयार्क-वाशिंगटन में हुए आतंकवादी हमले उसके आतंकवाद का सिर्फ आतंकवादी प्रतिकार मात्र है। यह एक किस्म का 'प्रति आतंकवाद' (काउण्टर टेररिज्म) है।

आतंकवाद महज पागलपन या मुट्ठी भर लोगों का जुनून नहीं होता। पहली बात, कभी-कभी इतिहास और समाज की वैज्ञानिक समझ के अभाव में, व्यापक जनता को जागृत व संगठित किये बिना, मुट्ठी भर बहादुर लोग अपने बहादुराना कारनामों से अन्याय का प्रतिरोध करते हैं और यह अपेक्षा करते हैं कि उनकी कुर्बानियों की बदौलत लोग उठ खड़े होंगे। यह सोच आतंकवाद के एक या दूसरे रूप की ओर ले जाती है। दूसरी बात, कभी-कभी आतंकवाद असह्य दमन-उत्पीड़न या आक्रमण की महज एक अन्धी प्रतिक्रिया होती है, जो अक्सर किसी न किसी प्रकार के मजहबी या पुनरुत्थानवादी आस्था से बल पाती है और मसीहा तथा उनके अनुयाइयों की शक्ल में अपने को देखती है। इस आत्मसम्मोहक मतिभ्रम के पीछे एक गहरी निराशा काम करती है। **प्राय: जनक्रान्तियां जब पराजित होती हैं, जब गतिरोध और उलटाव के दौर आते हैं, तो जनता में व्याप्त गहरी निराशा की जमीन से, मध्य वर्ग के बीच से ऐसी ताकतें पैदा होती है। इतिहास के रंगमंच पर जब जनक्रान्तियों के वास्तविक नायक नहीं होते तो उन लोगों को भी उत्पीड़ित जनता अपना नायक मान लेती है जो आत्मघाती हदों तक बहादुराना कारनामों द्वारा अन्यायी सत्ता को चुनौती देते हैं।** यह साम्राज्यवादियों की जघन्य करतूतें हैं और विश्वस्तर पर आज जनता में व्याप्त निराशा का तात्कालिक माहौल है कि ओसामा बिन लादेन में भी जनता नायक की तलाश कर रही है।

बहरहाल, साम्राज्यवादी इस विनाश के बाद भी अपनी करतूतों से बाज नहीं आयेंगे। वे आतंकवाद के "अदृश्य" शत्रु को तबाह करने के लिए अफगानिस्तान, इराक, फिलिस्तीन या लेबनान में या दुनिया के किसी दूसरे कोने में महाविनाश का कोई नया तांडव रचेंगे। इसकी एक प्रतिक्रिया तो यह होगी कि नये-नये दर्जनों ओसामा बिन लादेनों के सैकड़ों आत्मघाती दस्ते पैदा हो जायेंगे और नतीजतन अमेरिकी जनता भी साम्राज्यवादी नीतियां बदलने के लिए अपने शासकों पर दबाव बढ़ा देगी। दूसरी प्रतिक्रिया वह होगी जो बमों का "कालीन" बिछा देने के बाद वियतनाम में हुई थी।

(शेष पृष्ठ 34 पर)

इतिहास से भयाक्रान्त...

(पृष्ठ 11 का शेष)

उनके स्थान पर अर्जुन देव थे। वह कहते हैं कि कुत्वत उल इस्लाम के सामने एक सूचना पट्ट पर वह तथ्य लिखा हुआ है जिसे दीक्षित महोदय राष्ट्र को बताना चाहते हैं, उसे किताब में लिखने की आवश्यकता नहीं है। अर्जुन देव ने चिंता व्यक्त की है और कहा है कि इतिहास को साम्प्रदायिकता और मिथकों के अधीन करने का षडयंत्र किया जा रहा है।

जिन पुस्तकों को हटाए जाने का प्रस्ताव है वे हैं **विपन चंद्रा** के *आधुनिक भारत*, **रोमिला थापर** की प्राचीन और मध्य भारत पर पाठ्य पुस्तकें और सतीश चंद्रा की *मध्य भारत*। **रोमिला थापर** कहती हैं: "अगर आप पुस्तकों में संशोधन करना चाहते हैं तो सक्षम इतिहासकारों को ऐसा करने दें। क्या उन्होंने कोई कमेटी बनाई है और क्या उस कमेटी ने इन पाठ्य पुस्तकों के वापस लिए जाने को मान्यता दी है? हम जानना चाहते हैं कि वे विशेषज्ञ कौन हैं और किस आधार पर उन्होंने इन पुस्तकों से पीछा छुड़ाने का निर्णय लिया है। यह कहना कि कोई वैचारिक प्रेरणा नहीं, सही नहीं होगा।" उन्होंने मांग की कि एन.सी. ई.आर.टी. उन एक्सपर्टों की लिस्ट को सार्वजनिक करे जिन्हें पाठ्यक्रम की रूपरेखा बनाने के लिए उसने लगाया है। **प्रो. थापर** ने कहा, "वे जानते हैं कि अगर वे इतिहास को आर.एस.एस. के दृष्टिकोण से नहीं लिखेंगे तो उसे खारिज कर दिया जाएगा। इतिहास का उन्मूलन करने के पीछे एक यह वजह है। .. ये पाठ्य पुस्तकें आदर्श पाठ्य-पुस्तकें थीं और समझ यह थी कि यदि राज्य को उनमें कोई बदलाव करना था तो लेखकों के नाम हटा दिए जाएंगे। ... " हम मार्क्सवादी साहित्य नहीं लिख रहे थे। हम सामाजिक और आर्थिक इतिहास के कुछ विचारों को प्रतिबिम्बित करने की कोशिश कर रहे थे। लक्ष्य था स्तरीय सूचना देना।"

मध्य भारत के प्रतिष्ठित इतिहासकार **प्रो सतीश चंद्रा** आश्चर्य प्रकट करते हैं: "इतिहास तथ्यों के आधार पर लिखा जाना चाहिए या समुदायों की अति भावुकता को ध्यान में रखकर।"

अर्जुन देव ने बताया है कि प्रसिद्ध समाजशास्त्री योगेन्द्र सिंह, भू शास्त्री एजाजुद्दीन अहमद, जिन्होंने बारहवीं की भूगोल की पुस्तक लिखी है, समेत रोमिला थापर, डी.एन.झा, के.एम.श्रीमाली, सतीश चंद्रा जैसे विश्व प्रसिद्ध, प्रतिष्ठित इतिहासकारों को इस विषय से सम्बद्ध विशेषज्ञों की टीम से हटा दिया गया है।

जो कुछ होने जा रहा है उसकी भयंकरता का एहसास शायद अभी हमें ठीक से नहीं हो पा रहा है। अगर सभी इंसाफपसंद, संजीदा, तर्कपरक और साम्प्रदायिकता-विरोधी छात्र और शिक्षक एकजुट होकर इस भगवा साजिश के खिलाफ संघर्ष नहीं करेंगे तो हमें यह जान लेना चाहिए कि आने वाली सम्पूर्ण पीढ़ी इतिहास की एक विकृत, तोड़ी-मरोड़ी गयी तस्वीर से परिचित होगी। और कहना न होगा कि विकृत इतिहास बोध से सम्पन्न नयी पीढ़ी स्वस्थ मानवीय समाज की वाहक नहीं बन सकती।

...तबाह होता छात्रों-नौजवानों का भविष्य

(पृष्ठ 15 का शेष)

की दिशा में उठती हुई दिख रही, वही शासकों और उनकी व्यवस्था के लिए मरणान्तक होने जा रहा है। इसमें सन्देह नहीं होना चाहिए। इतिहास का सबक यही है।

जिन करोड़ों नौजवानों के सपने बदरंग हो रहे हैं, आकांक्षाएं धूल-धूसरित हो रही हैं, वे बहुत दिनों तक चुपचाप नहीं बैठेंगे। उनके भीतर सुलग रहा आक्रोश का लावा मुहाने तलाश रहा है और उन्हें वह मुहाना भी देर-सवेर मिल ही जायेगा। क्योंकि यह भी इतिहास का सबक है कि ऐसे ही दौरों में मेहनतकश अवाम के वे बहादुर बेटे-बेटियां आगे आ जाते हैं जो सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं, बगावत का जज्बा जिनके अन्दर हिलोरें ले रहा होता है। सबसे पहले ये नौजवान भगतसिंह का यह आह्वान सुनेंगे, फिर समूची युवा आबादी को यह साफ-साफ सुनायी देगी: **"अगर कोई सरकार जनता को उसके बुनियादी अधिकारों से वंचित रखती है तो उस देश के नौजवानों का यह अधिकार ही नहीं कर्तव्य बन जाता है कि ऐसी सरकार को उखाड़ फेंके या तबाह कर दें।"**

अमेरिकी सत्ताधारियों के हाथ...

(पृष्ठ 9 का शेष)

आतंकवाद को कुचलने के नाम पर जालिम राज्यसत्ताएं सिर्फ यही कर सकती हैं कि व्यापक आबादी को दमन का निशाना बनायें और ऐसा करते हुए वे जनक्रांति को आमंत्रण देने का काम करती हैं।

आतंकवाद विश्व इतिहास की महज एक संक्रमणकालीन परिघटना है। हाल की घटनाओं का एक निहितार्थ यह भी है कि इसी संक्रमण के दौरान भविष्य के रास्ते का नक्शा बनेगा और वित्तीय पूंजी के विनाशकारी विश्व वर्चस्व के विरुद्ध नयी जनक्रान्तियों की रूपरेखा तय होगी। तब तक, जिन आततायी सत्ताओं ने अतीत की जनक्रान्तियों को खून की नदी में

प्रायः जनक्रान्तियां जब पराजित होती हैं, जब गतिरोध और उलटाव के दौर आते हैं, तो जनता में व्याप्त गहरी निराशा की जमीन से, मध्य वर्ग के बीच से ऐसी ताकतें पैदा होती है। इतिहास के रंगमंच पर जब जनक्रान्तियों के वास्तविक नायक नहीं होते तो उन लोगों को भी उत्पीड़ित जनता अपना नायक मान लेती है जो आत्मघाती हदों तक बहादुराना कारनामों द्वारा अन्यायी सत्ता को चुनौती देते हैं।

डुबो दिया और जनता के स्वप्नों, आकांक्षाओं और उपलब्धियों को राख की मोटी परत के नीचे दबा दिया, उन्हें आतंकवादी कहर का कोप भुगतना ही होगा। यह उन्हीं का पाप है। उन्हें ही भुगतना है।

यह त्रासद है कि अमेरिकी शासक वर्ग के साथ ही अमेरिकी जनता को भी काफी विनाश झेलना पड़ रहा है। ऐसा उसने इतिहास में कभी नहीं झेला था। पर्ल हार्बर का विनाश भी इससे छोटा था और वह किसी आतंकवादी ग्रुप ने नहीं, बल्कि एक अन्य साम्राज्यवादी शक्ति ने किया था। लेकिन गौरतलब बात यह है कि इस बार के विनाश के बाद अमेरिका के भीतर भी जनमत अमेरिकी नीतियों को इसके लिए जिम्मेदार मान रहा है और अंधराष्ट्रभक्ति की भावनाओं में बहने के बजाय उन नीतियों को बदलने की मांग करता दीख रहा है। इस रुझान में भविष्य के कुछ महत्वपूर्ण संकेत छिपे हैं।

18 सितम्बर 2001